ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 164-166
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- I, Issues-23, YEAR- Jan.-March-2022

सरयूपार क्षेत्र के भौगोलिक परिदृश्य का अवलोकन

नरेन्द्र कुमार

नेट, जे0आर0एफ0– शोध अध्येता–प्राचीन इतिहास, पुरातत्त्व एवं संस्कृति विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ0प्र0), भारत

Received- 26.02.2022, Revised- 03.03.2022, Accepted - 06.03.2022 E-mail: narendra1031984@gmail.com

सारांशः – ***'सरयूपार एक भौगोलिक नाम है, जो सरयू नदी के उत्तरी क्षेत्र के लिये प्रयुक्त होता है। जिस क्षेत्र को आज हम सरयूपार कह कर सम्बोधित करते हैं, उसका पहला अभिलेखीय उल्लेख कलचुरि शासक सोढ़देव के वि0सं0 1134 (1077 ई0) के कहला दानपत्र में हुआ है। जिसमें सोढ़देव को ''सरयूपार–जीवितम्'' कहा गया है। अथर्ववेद और रामायण में भी ''सरयूपार'' नाम का उल्लेख मिलता है। गहड़वाल अभिलेखों में इस क्षेत्र का 'सरवार'' नाम अधिक लोकप्रिय रहा है। महर्षि पाणिनी के काल (पाँचवीं शती ई0पू0) में यह क्षेत्र सरवार कहा जाता था और ग्यारहवीं शताब्दी में यह क्षेत्र 'सरयूपार' कहा जाने लगा तो आज लोक भाषा में 'सरूआर' कहा जाता है।***

कुंजीभूत शब्द– कहला दानपत्र, सरयूपार–जीवितम्, अथर्ववेद, सरवार, लोकप्रिय, शैशवसंस्था, आजीविका, आदिमयुग।

मानव अपने परिवेश से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता, क्योंकि प्रकृति इतिहास की आधारशिला हैं अतः आदिम युग से भूगोल मानव–इतिहास का मुख्य नियामक रहा है। सभ्यता एवं संस्कृति की शैशवास्था में उस सामर्थ्य की कमी थी, जिसके कारण यह वर्तमान में विभिन्न प्राकृतिक शक्तियों एवं संसाधनों को विजित कर उनसे अनेकशः लाभ लेता है, उस काल में प्राकृतिक शक्तियों एवं संसाधनों के नियंत्रण एवं प्रतिरोध की अपेक्षा उनसे बचकर रहना अच्छा माना जाता था। मानव वहीं निवास करता था, जहाँ अनायास ही प्रकृति उन्हें आजीविका के साधन एवं सुरक्षा प्रदान कर देती थी। इससे स्पष्ट होता है कि किसी देश, प्रदेश अथवा राज्य का भौगोलिक वातावरण (प्राकृतिक भूगोल) उसके राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक आदि सभी बिन्दुओं को अनेकशः प्रभावित करता है। सरयूपार के भौगोलिक–पर्यावरण का इसके राजनीतिक जीवन पर प्रभाव पड़ा। वर्तमान क्षेत्र में सरयू नदी के उत्तर से उत्तर प्रदेश एवं नेपाल के मध्य अन्तर्राष्ट्रीय सीमा तक स्थिति, उत्तर प्रदेश का उत्तरी पूर्वी भाग है, जिसमें देवीपाटन, बस्ती एवं गोरखपुर मण्डल के 11 जिलों (बहराइच, श्रावस्ती, बलरामपुर, गोण्डा, बस्ती, सिद्धार्थनगर, संतकबीर नगर, गोरखपुर, महराजगंज, कुशीनगर और देवरिया) सम्मिलित हैं। पश्चिमोत्तर भाग से लेकर दक्षिण–पूर्व तक सरयू नदी की धारा से आबद्ध यह क्षेत्र हिमालय पर्वतीय भाग को सन्निकट उत्तर–पूर्व में सदानीरा (बड़ी गण्डक) के प्राचीन मार्ग तक विस्तृत इस क्षेत्र का अपना एक विशिष्ट महत्व है।

सरयूपार क्षेत्र अपने राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों से ऐतिहासिक काल से समृद्ध एवं सम्पन्न रहा है, प्राचीन भारत के प्रेरक नैतिक सांस्कृतिक, कारकों पर हम ध्यान दें तो सरयूपार की धर्म संस्कृति के अध्ययन के बिना हमारा राष्ट्रीय इतिहास अधूरा हो जायेगा। यह परिक्षेत्र धार्मिक एवं सांस्कृतिक जीवन का नाभिक केन्द्र रहा है। यहाँ पर शैव, वैष्णव, शाक्त, जैन, बौद्ध जैसे प्रवृत्ति मार्ग व निवृत्ति मार्गों मतों ने समय–समय पर अपना प्रभाव सम्प्रदाय (नाथ परम्परा) को यहाँ की संस्कृतिक ने बहुत अधिक आत्मसान किया। सरयू घाटी में शैव परम्परा के अत्यन्त प्राचीन साक्ष्य प्राप्त होते हैं।

ध्यातव्य है कि पिछली शताब्दी में स्वदेश के अन्य भागों की तरह इस परिक्षेत्र में भी पुरातात्त्विक सर्वेक्षण व उत्खनन के कार्य सम्पन्न हुए कुछ महत्वपूर्ण प्रयास तो 19वीं शताब्दी में ही हो चुके थे, फलतः श्रावस्ती (सहेत–महेत) कुशीनारा (कुशीनगर), कपिलवस्तु (पिपरहवा), सोहगौरा, फाजिलनगर, साठियांव (श्रेष्ठिग्राम), रहन और खैराडीह बसडीला टीला हार के टीलों के विस्तृत उत्खनन किए गये। इनके अतिरिक्त सम्बद्ध जनपदों के अनेक स्थलों के पुरातात्त्विक सर्वेक्षण के विवरण भी हमें उपलब्ध हैं साथ ही यथा समय ज्ञात यहाँ के प्राचीन कला संदर्भों पर कुछ शोध लेख भी प्रकाशित हैं। उपयुक्त साक्ष्यों से विदित है कि यहाँ युग–युगों में कला का विकास होता रहा है। सरयूपार क्षेत्र हिमालय की तराई का परिक्षेत्र है जो नेपाल देष की सीमा रेखा से जुड़ा है और इस महत्वपूर्ण पौराणिक–ऐतिहासिक अंचल में आजकल कई जनपद अस्तित्व में हैं कहने की आवश्यकता नहीं एक तरफ यहाँ मरव–क्षेत्र (मखौड़ा, निकट अयोध्या जनपद बस्ती) से लेकर भृगु–क्षेत्र (जनपद बलिया) तक श्रौत–स्मार्त–परम्परा के अन्तर्गत वैष्णव, शैव, शाक्त सौर मतों को प्रतिबिम्बित करने वाले स्थान हैं तो श्रमण परम्परा (जैन व बौद्ध धर्म) सगुण एवं निर्गुण भक्ति धारा से जुड़े यहाँ अनेक बिन्दु देखे जा सकते हैं। गोरक्षनाथ की भूमि गोरखपुर के चतुर्दिक प्रायः सभी जनपदों में शैव परम्परा के पवित्र पूजा स्थल और देवालय विद्यमान हैं। इसी क्षेत्र में स्थित है रूढिवादी प्रवृत्ति के मुखर एवं प्रखर विद्रोही संत कवि कबीर की समाधि। सिद्धार्थ की जन्म स्थली यद्यपि आज कल नेपाल की सीमा में है पर उनकी क्रीड़ा भूमि कपिलवस्तु (अब सिद्धार्थनगर) बोधि–प्राप्ति के अनन्तर चारिका देशना से जुड़े तमाम स्थल इसी क्षेत्र में हैं। यद्यपि

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- I, Issues-23, YEAR- Jan.-March-2022

आश्चर्य की बात है और विचारणीय भी कि यहाँ से बौद्ध–मूर्तियाँ बहुत कम उपलब्ध हैं। जैन धर्म के कई तीर्थकर सरयू–राप्ती के बीच ही उत्पन्न हुये थे।

भौमिकीय दृष्टि से यह क्षेत्र जलोढ़ अवसादों से निर्मित मैदान हैं इस मैदान का जमाव मध्य प्लीस्टोसीन युग से आरम्भ होकर आज तक अबाधगति से चलता जा रहा है। स्थिति एवं संरचना की दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र की भूमि को निम्न प्राकृतिक प्रदेशों में विभक्त करना समीचीन जान पड़ता है। इनमें सरयू–राप्ती के दोआब में सरयू खाद, सरयू–राप्ती बांगर तथा राप्ती–गण्डक दोआब में राप्ती खादक, गण्डक खाद, भाँवर, राप्ती गण्डक बांगर तथा तराई प्रमुख है। यह एक मैदानी भू–भाग है, जो नवीन जलोढ़ निक्षेपित भूमि तथा प्राचीन जलोढ़ निक्षेपित क्रमशः खादर एवं बांगर क्षेत्र में निर्मित है। जिसकी औसत ऊँचाई 85 मी0 है। यह पूरा क्षेत्र बालू के टीले (धूस), गोरखपुर झीले तथा नदियों के मार्ग परिवर्तन से निर्मित कुछ उबड़–खाबड़ क्षेत्र के अतिरिक्त सम्पूर्ण क्षेत्र समतल मैदानी भू–भाग है। न्यून–ढाल छिद्र युक्त मृदा के कारण जल का भूमिगत रिसाव अपेक्षाकृत अधिक है। इसलिए उत्तरी क्षेत्र में दलदल और भूगर्भित जल तथा नदियों को परित्यक्त मार्गों की अधिकता है। इस क्षेत्र का ढाल उत्तर–पष्चिम से दक्षिण–पूर्व की ओर प्रवाहित होता है। बड़ी गण्डक, छोटी गण्डक, राप्ती, अचिरावती, रोहिणी एवं सरयू (घाघरा) यहाँ की प्रमुख नदियाँ हैं। इनके अतिरिक्त लघु सरिताएँ भी है, जो कुछ दूरी तय करने के उपरान्त बड़ी नदियों द्वारा स्वयं में समाहित कर ली जाती है। बड़ी गण्डक एवं इसकी सहायक नदियों के अतिरिक्त इस क्षेत्र की सभी छोटी–बड़ी नदियाँ सरयू नदी में समाहित हो जाती है। जिसमें सरयू, रोहिणी, राप्ती, आमी, छोटी गण्डक, सदानीरा (गण्डीक) आदि प्रमुख है।

इस परिक्षेत्र में झीलों का निर्माण प्रवाहित होने वाली नदियों एवं लघु सरिताओं के पथ परिवर्तन से हुआ है। अतः इन्हें 'झाड़न–झील' नाम देना ही उचित जान पड़ता है। इनकी आकृति बहुधा अर्धवृत्ताकार होन के कारण इन्हें 'गोखुरझील' भी कहते हैं। यहाँ प्राकृतिक झील एवं भूगार्भिक कारणों से निर्मित झीलों का सर्वथा अभाव है। 'ताल' झाड़न–झील का ही पर्याय है। सामान्यतः इस क्षेत्र में इसका प्रयोग इसी अर्थ में होता है। इसमें पश्चिमी भाग में तालों की अधिकता है जिनमें रामगढ़ नरही (गोरखपुर के पूर्व–दक्षिण), डोमिनगढ, करमैनी (गोरखपुर के पश्चिम–उत्तर) नन्दौर (राप्ती का झाड़न) अमियर (आमी का झाड़न) मेड़ी सरयू एवं राप्ती के मध्य स्थित तरैना का झाड़न आदि प्रमुख है। इस क्षेत्र के पूर्वी भागों में बड़े झाड़न–झीलों की संख्या न के बराबर है।

इसका एक मात्र कारण इस क्षेत्र में नदियों एवं लघुसरिताओं की अत्यल्पता है, फिर भी छोटी गण्डक एवं बड़ी गण्डक के पथ बदलने के कारण कुछ तालों का निर्माण हुआ है, जिसमें रामसंभार अथवा रामाभार (कुशीनगर के दक्षिण पूर्व में जो ग्रीष्म काल में पूर्णतया सूख जाता है) सिंगहा (रामकोला के उत्तर) कुषेश्वर, चकहवा, दुभरनी, गड़ेर आदि उल्लेखनीय है।

सरयूपार का यह परिक्षेत्र प्राकृतिक वनस्पतियों से आच्छादित था। जिसमें महावन, अंजन वन, कंटकी वन, सुभग वन, पलासवन, केतन वन, सिसवा वन, वेलद्वार वन, जेतवराम, अन्ध वन, महारानी मल्लिका का उपवन, परिलेय्याक वन, लुम्बिनी का शालवान, कोलवन, पिफफलिवन अथवा पिप्पलीवन, उपपत्तक संज्ञक शालवान और आम्रवन इत्यादि विद्यमान है।

सरयूपार क्षेत्र उपोष्ण कटिबन्ध में स्थित एक उष्ण एवं आर्द्र प्रदेश है। यहाँ की जलवायु हिमालय की पर्वत श्रृखला एवं बंगाल की खाड़ी से सर्वाधिक प्रभावित होती है तथा मानसूनी है। इस क्षेत्र की जलवायु सामान्यतः सम बनी रहती है। यहाँ न तो भयंकर गर्मी पड़ती है और न ही अतिशय शीत का ही आभास होता है। इस मानसूनी क्षेत्र में स्पष्टतः तीन ऋतुएँ – ग्रीष्म ऋतु (मार्च से मध्य जून तक), वर्षा ऋतु (मध्य जून से मध्य अक्टूबर तक), शीत ऋतु (मध्य अक्टूबर से फरवरी तक) होती है। सरयूपार क्षेत्र पर्वतीय एवं मैदानी दोनों प्रकार के भू–दृश्यों को स्वयं में समाहित है। इसके उत्तर में हिमलाय की श्रृंखलायें तथा दक्षिणी भाग में मैदानी क्षेत्र फैला है। यहाँ की जलवायु मानसूनी है। इस क्षेत्र का वार्षिक तापान्तर 300 से0ग्रे0 तथा वार्षिक वर्षा 100–120 सेमी0 है। न्यून ढाल के कारण तराई क्षेत्र में दलदली भूमि भी मिलती है। भूमि की संरचना के कारण सम्पूर्ण मैदान में अधिकांश जल रिस–रिस कर भू–गर्भ में चला जाता है। अतएव यहाँ हमेशा नमी बनी रहती है। उपर्युक्त कारकों ने यहाँ की वनस्पति को भली–भांति प्रभावित किया हैं, जिसके कारण प्राचीन काल से ही यह क्षेत्र घने वनों द्वारा ढका रहा है। बिटिश काल से वन सम्पदा के तीव्र दोहन की बढ़ती हुई प्रवृत्ति के कारण प्राकृतिक वन पर कृष्य क्षेत्र में परिगणित होने लगे हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. वर्मा, ठाकुर प्रसाद, संपादकीय, युग युगीन, सरयूपार, पृ0 1.
2. अग्निहोत्री, डॉ0 प्रभुदयाल, पतंजलि कालीन भारत, पृ0 88.

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- I, Issues-23, YEAR- Jan.-March-2022

3. चतुर्वेदी, डॉ0 इन्द्रदेव प्रसाद, श्री सरयूपारीण ब्राह्मण वंषावली, पृ0 18.
4. जयपालदेव का सिलिमपुर, अभिलेख, ए0ई0 13, पृ0 290, श्लोक 2, मूल पाठ ।
5. त्रिपाठी, प्रो0 माता प्रसाद, विशेष व्याख्यान, कुँवर श्री, पृ0 XXXIX .
6. पाठक, वी0एस0 ऐंसिएण्ट हिस्टोरियंस ऑफ इण्डिया, 1996, प्रथम अध्याय ।
7. उत्तर भारत, भूगोल पत्रिका, भूगोल परिषद, गो0, वि0वि0, जून, 1970, पृ0 26.
8. सोढ़देव का कहला अभिलेख (दानपत्र), 30वाँ श्लोक, 32वीं पंक्ति, श्रीमत्सोढ़देवोयं सरयूपार जीवितम्! बिदुषामग्रणी : शूरो धर्म राशिः प्रजेश्वरः 130.
9. उत्तर–भारत–भूगोल पत्रिका, भूगोल–परिषद, गो0विवि0, जून 1970, पृ0 26.
10. मामोरिया चतुर्भुज, भारत भूमि, पृ0 35.

*****